RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल-011/2015-17

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 76, अंक : 15 एक प्रति 2 : रुपये
कुल पृष्ठ : 8
रविवार 14 जुलाई, 2019
विक्रमी सम्वत् 2076, सृष्टि सम्वत् 1960853120
दयानन्दाब्द : 195 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
आजीवन शुल्क : 1000 रुपये
दूरभाष : 0181-2292926, 5062726
E-mail: apspunjab2010@gmail.com,
www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष—76, अंक : 15, 11-14 जुलाई 2019 तदनुसार 30 आषाढ़, सम्वत् 2076 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

तेरा जानकार विरला

ले०-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

इच्छन्ति त्वा सोम्यासः सखायः सुन्वन्ति सोमं दधति प्रयांसि।
तितिक्षन्ते अभिशस्तिं जनानामिन्द्र त्वदा कश्चन हि प्रकेतः।।

-ऋ० ३।३०।१

शब्दार्थ-हे **इन्द्र** = परमेश्वर! **सोम्यासः** = शान्तस्वभाव जन **सखायः** = मित्र होकर **त्वा** = तुझको **इच्छन्ति** = चाहते हैं। इसके लिए वे **सोमम्** = सोम को **सुन्वन्ति** = कूटते हैं, अर्थात् सोमयज्ञ आदि का अनुष्ठान करते हैं, **प्रयांसि** = प्रयास, परिश्रम **दधति** = धारण करते हैं और **जनानाम्** = लोगों की **अभिशस्तिम्** = निन्दा, आक्षेप, सख्ती=क्रूरता को **तितिक्षन्ते** = सहते हैं। **हि** = सचमुच **कश्चन** = कोई विरला ही **त्वत्** = तुझसे **आ+प्रकेतः** = भली प्रकार ज्ञान प्राप्त करता है।

व्याख्या-भगवान् को वाचिकरूप में चाहने वालों की संख्या विशाल है। सभी आस्तिक कहते हैं-हम भगवान् को चाहते हैं। चाहना का प्रकाश कई प्रकार से होता है-

(१) **'इच्छन्ति त्वा सोम्यासः सखायः'**-सोम्य-शान्तस्वभावजन मित्र होकर तुझे चाहते हैं। अनेक जन भगवान् के मित्र=सखा बनकर उससे प्रीति करते हैं। भगवान् के समानशील बनकर जीवन-यापन करते हैं।

(२) **'सुन्वन्ति सोमम्'**-कई सोम-याग करते हैं। उन्होंने जान रखा है कि वह **'एकः पुरुप्रशस्तो अस्ति यज्ञैः'** [ऋ० ६।३४।२]-अकेला यज्ञों के द्वारा अनेक प्रकार से प्रशंसित होता है। यज्ञों में जिन मन्त्रों का पाठ होता है, उनमें क्रियमाण कर्मविधान के साथ भगवान् की महिमा का बखान भी होता है और निष्कामभाव से=केवल भगवान् का विधान मानकर किये गये यज्ञ-यागों का उद्देश्य भगवान् होता है, अतः कोई लोग तप से भगवान् को प्राप्त करना चाहते हैं। वे-

(३) **'दधति प्रयांसि'**-परिश्रम, तप करते हैं। कई मनुष्य भगवान् की प्राप्ति के लिए नानाविध तप करते हैं। कठोपनिषत् में कहा है-

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्।।

-कठ० १।२।१५

सब वेद जिस पद का उपदेश करते हैं, सारे तप जिसका वर्णन करते हैं, जिसकी इच्छा करते हुए लोग ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं, वह पद तुझे संक्षेप से बतलाता हूँ, वह 'ओम्' है।

सम्पूर्ण तपों का लक्ष्य परमात्मा ही है। ब्रह्मचर्य का तो अर्थ ही 'ब्रह्म=भगवान् चर्य्या=गम्य=प्राप्तव्य है, जिस क्रिया के द्वारा वह जाना जाए वह ब्रह्मचर्य है। इतना ही नहीं, वरन् कई भक्त-

(४) **तितिक्षन्ते अभिशस्तिं जनानाम्**-लोगों की निन्दा, आक्षेप और सख्ती=कठोरता को सहन करते हैं। प्रभुभक्ति के मार्ग पर चलने वालों की लोग अनेक प्रकार से फ़ब्तियाँ उड़ाते हैं। परिवार, परिजन के लोग उसे निकम्मा-निठल्ला कहकर उसके चित्त को चिढ़ाने का यत्न करते हैं, कोई उसकी साधना में बाधना डालते हैं। इतना होने पर भी **'त्वदा कश्चन हि प्रकेत'** = उसे कोई विरला ही जान पाता है। यम ने भी नचिकेता को यही कहा था-**'आश्चर्योऽस्य लब्धा'** = इसको प्राप्त करने वाला दुर्लभ है। दुर्लभ है, अलभ्य नहीं।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः।।

-यजु० ४०.७

भावार्थ-जो विद्वान् संन्यासी महात्मा लोग, परमात्मा के पुत्र प्राणिमात्र को अपने आत्मा के तुल्य जानते हैं, अर्थात् जैसे अपना हित चाहते हैं, वैसे ही अन्यों में भी वर्तते हैं। एक अद्वितीय परमात्मा की शरण को प्राप्त होते हैं, उनको शोक, मोह, लोभादि कदाचित् प्राप्त नहीं होते। और जो लोग, अपने आत्मा को यथार्थ जानकर परमात्मा परायण हो जाते हैं, वे सदा सुखी रहते हैं, ईश्वर से विमुख को कभी सुख की प्राप्ति नहीं होती।

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳशुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्व-तीभ्य समाभ्यः।।

-यजु० ४०.८

भावार्थ-जो परमात्मा, अनन्तशक्ति युक्त अजन्मा, निराकार, सदा मुक्त, न्यायकारी, निर्मल, सर्वज्ञ, सबका साक्षी, नियन्ता, अनादिस्वरूप, सृष्टि के आदि में ब्रह्मर्षियों द्वारा वेद विद्या का उपदेश न करता तो कोई विद्वान् न हो सकता। ऐसे अजन्मा, निराकार जगत्पति का जन्म मानना और उसका आकार बताना घोर मूर्खता और वेदविरुद्ध नास्तिकता नहीं तो और क्या है? परमात्मा कृपा करके ऐसी नास्तिकता से जगत् को बचावे, ऐसी प्रार्थना है।

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्याꣳरताः।।

-यजु० ४०.९

भावार्थ-जो मनुष्य, समस्त जगत् के प्रकृति रूप जड़ कारण को उपास्य ईश्वर भाव से स्वीकार करते हैं। वे अविद्या में पड़े हुए क्लेशों को ही प्राप्त होते हैं, और जो कार्य जड़ जगत् को उपास्य इष्टदेव ईश्वर जानकर, उस जड़ पदार्थ की उपासना करते हैं, वे गाढ़ अविद्या में फँस कर, सदा अधिकतर क्लेशों को प्राप्त होते हैं। इसलिए सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा को ही, अपना पूज्य इष्टदेव जानकर, उसी की ही सदा उपासना करनी चाहिये, किसी जड़ पदार्थ की नहीं।

यज्ञ से पूर्व शुद्धि

ले.-पण्डित वेद प्रकाश शास्त्री, 4-E, कैलाश नगर, फाजिलका

मानव जीवन में यज्ञ का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। परन्तु यज्ञ करने से पूर्व आवश्यकता है-शुद्धि की। शुद्धि-स्वच्छता= निर्मलता को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. यज्ञ स्थल की शुद्धता।

2. हव्य पदार्थों की शुद्धता।

3. शरीर की शुद्धता।

1. यज्ञ स्थल की शुद्धता-जहां हमें यज्ञ करना है, वह स्थान साफ-सुथरा और शुद्ध-पवित्र होना चाहिए। वस्तुत: यज्ञ हेतु तीन स्थान हैं-

(क) गृह (ख) यज्ञशाला (ग) विशिष्ट आयोजन स्थल (क) गृह-जहां पर यज्ञ करना है, वह शुद्ध पवित्र होना अत्यावश्यक है। इसके लिए खुला हवादार कमरा हो। सामान्यत: आंगन सर्वोत्तम स्थान है। आजकल प्राय: बिना आंगन वाले मकानों का प्रचलन बढ़ रहा है। अत: जिसके लिए जैसी सुविधा हो, उसी के अनुसार अतिथियों की संख्या के दृष्टिगत स्थान चयन करना उत्तम है। कमरे में करना पड़े तो कमरे के दरवाजे, खिड़कियां, रोशनदान सभी खुले होने चाहिए। कई लोग सुविधानुसार मौसम को देखते हुए छत पर भी कर लेते हैं। मुख्य उद्देश्य यज्ञ सम्पन्न करना है। बस स्वच्छता होनी चाहिए।

(ख) यज्ञशाला-जहां पर यज्ञशाला अर्थात् आर्य समाज मन्दिर समीप है, वहां सम्मिलित हो सकते हैं।

गृह एवं यज्ञशाला दोनों स्थानों की स्वच्छता, शुद्धता अनिवार्य है। अत: स्थान-शुद्धि के लिए तैत्तरीय आरण्यक में विशेष प्रार्थना है-

आप पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्।।

तै. आ. प्र. 10 अ. 23

जल पृथिवी को पवित्र करे अर्थात् जिस स्थान पर सन्ध्या, उपासना, यज्ञ आदि कार्य कर रहे हैं, वह स्थान जलादि से आवश्यकतानुसार धोकर अथवा लीप कर स्वच्छ कर लेना चाहिए। वह स्वच्छ हुआ स्थान (पृथिवी) मुझ उपासक को पवित्र करे।

यज्ञशाला नित्य धोकर स्वच्छ कर लेना चाहिए। कई यज्ञशालाओं में मैट/दरियां आधुनिक ढंग से चिपकाई हुई होती हैं, उन्हें भी झाडू पोछा आदि से प्रतिदिन साफ करें। आसन भी साफ सुथरे हों। यज्ञ पात्र भी साफ होने चाहिए।

विशेष अवसरों पर ध्वजा, पताका, पल्लव आदि बांधना चाहिए। कुंकम, हल्दी, मैदा की रेखाओं अथवा पुष्पों से यज्ञवेदी को सुभूषित करें। यज्ञकुण्ड का नित्य मार्जन तथा गोमय (गोबर) शुद्ध चिकनी मिट्टी के साथ मिला कर लेपन अवश्य करना चाहिए।

क्योंकि स्वच्छता से ही उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। व्यक्ति प्रसन्न एवं शान्तचित्त रहता है। आगन्तुक महानुभावों को भी स्वच्छता, समुचित व्यवस्था देख कर प्रसन्नता होती है। आयोजक भी प्रशस्ति के पात्र बन जाते हैं।

वर्तमान समय में अनेक आर्य समाजों में यज्ञवेदी के हवन कुण्ड का मार्जन/लेपन नहीं किया जाता। बस, केवल राख निकाल दी जाती है, इतना ही पर्याप्त समझा जाता है। अनेक समाजों में पुरोहित होते हैं, वे भी इस ओर ध्यान नहीं देते। वह स्वयं ही अमार्जित अलेपित हवनकुण्ड में यज्ञ कराते हैं, यह न केवल चिन्त्य है अपितु दु:खद भी। आर्य समाज के प्रधान/मन्त्री, सदस्यों के मध्य यदा कदा इस विषय पर चर्चा भी होती है, परन्तु बाद में बात आई गई हो जाती है और स्थिति सामान्य होकर यथापूर्व स्थान पर आ जाती है। इससे विदित होता है कि हम मुख्य कार्य को गौण बनाते जा रहे हैं।

वस्तुत: इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार विमर्श करके इसका निदान होना अत्यावश्यक है। जिससे यज्ञ को 'श्रेष्ठतम' स्थान प्राप्त हो सके।

एतत् सम्बन्धी एक अन्य विषय की ओर आर्यजनों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। वह है-कई संस्थाओं में यज्ञशालाएं बनी हैं, परन्तु यज्ञ कुण्ड की लम्बाई, चौड़ाई और गहराई महर्षि दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट विधि के अनुसार नहीं है। अत: उसमें धातु निर्मित हवन कुण्ड रखते हैं। इस स्थिति में निर्मित हवनकुण्ड का कोई औचित्य नहीं रह जाता। अत: धातु निर्मित हवनकुण्ड न रखकर पूर्व हवनकुण्ड विधिपूर्वक बनवा कर उसमें यज्ञ करना ही श्रेयस्कर है। यदि ऐसा नहीं हो पाता तो ''पर उपदेश कुशल बहुतेरे'' की उक्ति को ही चरितार्थ करना कहा जायगा। जब हम इस छोटी सी त्रुटि में सुधार नहीं कर सकते तो बड़ी बातों के सुधार की आशा करना केवल कल्पनामात्र ही है।

आर्य समाज में सेवक तो होता ही है। यज्ञ सम्बन्धी समस्त तैयारियां सेवक को ही करनी होती हैं। अत: उसे पूर्णत: निर्देशित किया जाना चाहिए कि अमुक कार्य कैसे करे? जिन समाजों में सेवक नहीं है, वहां कोई स्वयं सेवक स्वयं यह उत्तरदायित्व ले सकता है। बारी-बारी से क्रमश: किया जा सकता है। बस बात सेवा भावना की है। यदि आर्यजनों में पदाधिकारी, स्वामी, सेवक छोटे बड़े होने की भावना आ जायगी तो उन्नति असम्भव है।

(ग) विशिष्ट स्थल-विभिन्न विशेष अवसरों पर यथा-महापुरुषों की जयन्ती, पुण्य स्मृति दिवस, आत्मिक शान्ति यज्ञ, धार्मिक समारोह आदि हेतु 'पैलेस' सदृश विशेष स्थानों का चयन आवश्यकतानुसार किया जाता है, जहां अधिसंख्य महानुभाव सम्मिलित हो सकें। एतादृश अवसरों पर आर्य समाज मन्दिर से यज्ञीय सामान=आसन, यज्ञपात्र, हवन कुण्ड, समिधा आदि ले जाने में सुविधा रहती है। जिस सामान की कमी हो, उसे यजमान के माध्यम से मंगवाना चाहिए। जिससे सुविधापूर्वक यथा समय यज्ञ सम्पन्न किया जा सके।

2. हव्य पदार्थों की शुद्धता-हव्य पदार्थों के अन्तर्गत दो प्रकार के पदार्थों की गणना की जाती है-

(क) हवन सामग्री-महर्षि दयानन्द ने हवन सामग्री में चार प्रकार के पदार्थ प्रयोग करने के लिए निर्देश किया है-

1. सुगन्धित, केशर, अगर, तगर, गुग्गल, कर्पूर, चन्दन, लौंग, इलायची (छोटी, बड़ी), जायफल, जावित्री।

2. पुष्टिकारक-घृत, दूध, फल, अन्न, चावल, जौ, तिल, मखाने, बादाम, गरी गोला, गेहूँ, उड़द आदि।

3. मिष्ट-शक्कर, शहद, छुहारा, किशमिश, गुड़, चीनी आदि।

4. रोगानाशक-गिलोय, ब्राह्मी, शंखपुष्पी, सोंठ, मुलहठी, रक्तचन्दन, तुलसी आदि।

आजकल हवन सामग्री बनी बनाई उपलब्ध है। जिसमें विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूटियां मिली होती हैं। फिर भी सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि किस कम्पनी की सामग्री सर्वधिक अच्छी है।

आर्य समाजों में प्राय: अच्छी जगह से सामग्री मंगाई जाती है। अत: वहीं से ली जा सकती है। इतना अवश्य है कि आर्य समाजें स्वयं प्राय: सूखी हवन सामग्री ही आहुति के रूप में समर्पित करती हैं। उसमें उपर्युक्त तीन प्रकार के पदार्थ नहीं मिलाते। कम से कम घी, गुड़/चीनी, चावल, जौ, मखाने, गुग्गल, गरी, कर्पूर, इलायची आदि हवन सामग्री में अवश्य मिलाना चाहिए। चाहे आर्य समाज में हवन हो अथवा आर्य समाज की ओर से किसी परिवार में। इतनी चीजें अवश्य मिलाएं। जिससे वातावरण भी सुगन्धित बने। ''सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्'' का कथन भी सार्थक हो सके।

(ख) समिधा-यज्ञ हेतु समिधाएं मलिन देशोत्पन्न, कीड़ा लगी और अपवित्र पदार्थ आदि से दूषित न हों, अच्छी प्रकार देख लेवें। समिधा पलाश, शमी, पीपल, बड़, गूलर, आम, बिल्व, चन्दन, बादाम आदि की होनी चाहिए। जो वेदी के प्रमाणे छोटी बड़ी काट लेवें। परन्तु त्रिसमिधादान हेतु आठ-आठ अंगुल की समिधाएं पहले ही कटवा कर अलग रख लेवें जिससे आवश्यकता पड़ने पर कठिनाई न हो। परन्तु आजकल बिना माप की तीन समिधाएं काम में आ रही हैं। इसमें सुधार अत्यावश्यक है।

विशेष यज्ञ आयोजनों-ग्यारह कुण्डीय, इक्यावन कुण्डीय महायज्ञ में ब्रह्मा के आसन पर सुशोभित बड़े बड़े विद्वान् भी छोटी-बड़ी समिधाओं तथा हवन सामग्री में मिले, न मिले पदार्थों की ओर कोई ध्यान नहीं देते। कहीं ऐसा तो नहीं कि वे इसे अपने कार्य या अधिकारक्षेत्र से बाहर समझते हों अथवा इसका उत्तरादायित्व अन्यों पर डालना चाहते हों। जो भी हो परन्तु है चिन्तनीय।

इससे सम्बन्धित विद्यमान समस्याएं/सुझाव मीटिंग में उपस्थित कर विचार-विमर्श भी किया जा सकता है। अपनी प्रतिक्रियाएं भी व्यक्त कर सकते हैं। अस्तु।

यज्ञार्थ आवश्यक सामान का काव्यात्मक वर्णन माननीया आर्या विमलेश बंसल दर्शनाचार्या ने अत्यन्त सरल एवं मनोहारी शब्दों में किया है। रोचक एवं ग्राह्य होने से आप सभी के पठनार्थ प्रस्तुत कर रहा हूँ।

यज्ञार्थ सामान (काव्यमयी प्रस्तुति)

यज्ञ का क्या होता सामान, सुन लो मेरे प्रिय यजमान।

हवनकुण्ड सामग्री समिधा, दें गोधृत सामग्री में खूब मिला।

कुछ सूखे मेवे और गरीगोला, भरें भात रहे न पोला।

सामग्री को श्रेष्ठ बनाएं, चार तरह के द्रव्य मिलाएं।

समिधा आम पीपल की हों, आठ अंगुल की तीन घी में डूबी हों।

हवन कुण्ड को स्वच्छ बनाकर, रखें बीच में खूब सजाकर।

चार गिलास और लोटा जल, भर कर रखें कुंड के चहुं स्थल।

दीपक चावल माचिस रोली, यज्ञोपवीत कपूर की गोली।

घर का मीठा भात बनाना, चाहिए यज्ञ प्रसाद चढ़ाना।

कुछ फल मिष्टान्न वितरण करने, रखना लेकर प्रसाद के दोने।

स्वच्छ साफ पहनना परिधान, धोती कुर्ता हमारी शान।

सपरिवार मित्र पड़ोसी, बुला के रखना चाची मौसी।

चाहिए पुष्प पहनने हार, करने को आशीषों की बौछार।

आएंगे करने तब यज्ञ, घर को 'विमल' बनाना स्वच्छ।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

पर्यावरण के संरक्षण के लिए जागरूक बनें

आज विश्व का सर्वाधिक चर्चित और चिन्तनीय विषय पर्यावरण है। वृक्षों के अन्धाधुन्ध कटान से पर्यावरण की समस्या लगातार बढ़ती जा रही है। जल का दुरूपयोग दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है। प्राकृतिक पदार्थों का दोहन मानव के द्वारा किया जा रहा है। मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए प्राकृतिक पदार्थों वृक्ष, जल, वायु आदि का संरक्षण करने के बजाय उसको नष्ट करने में लगा हुआ है। विकास के नाम पर प्रकृति का दोहन किया जा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप बाढ़, भूकम्प, अतिवृष्टि, अनावृष्टि आदि प्राकृतिक प्रकोप देखने को मिल रहे है। अंधाधुध गाड़ियों, कारखानों से निकलने वाले धूएं से पर्यावरण दिन-प्रतिदिन प्रदूषित हो रहा है। इस समस्या के समाधान के लिए किसी के पास कोई उपाय नहीं है। पर्यावरण के घटक तत्व हैं वायु, जल, भूमि, वृक्ष-वनस्पतियाँ। अथर्ववेद में सर्वप्रथम जल-वायु के अतिरिक्त ओषधियों या वृक्ष वनस्पतियों को पर्यावरण का घटक तत्व बताया गया है। वेद में इन तत्वों को छन्दस् कहा गया है। छन्दस् का अर्थ है- आवरक या पर्यावरण। अथर्ववेद का कथन है कि जल-वायु और वृक्ष वनस्पति ये पर्यावरण के घटक तत्व हैं और ये प्रत्येक लोक में जीवनी शक्ति के लिए अनिवार्य हैं, यदि ये नहीं होंगे तो मानव का जीवित रहना सम्भव नहीं है। इन तत्वों के प्रदूषण या विनाशन से पर्यावरण प्रदूषण होता है। आज विश्वभर में भूमि, जलवायु आदि सबको अत्यधिक मात्रा में प्रदूषित किया जा रहा है। यांत्रिक उपकरण इस समस्या को और बढ़ा रहे हैं। जीवनी शक्ति प्राणतत्व या आक्सीजन के एकमात्र स्रोत वृक्ष वनस्पतियों को निर्दयतापूर्वक काटा जा रहा है। यदि वृक्ष नहीं होंगे तो मनुष्य को ऑक्सीजन नहीं मिल पाएगा और वह जीवित नहीं रह सकेगा। वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए जलवायु और वृक्ष वनस्पतियों को प्रमुख साधन बताया है।

वायु संरक्षण करें-वेदों में वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, द्यु-भू अर्थात् भूमि और द्युलोक के संरक्षण की बात अनेक मन्त्रों में कही गई है। साथ ही वृक्ष वनस्पतियों के संरक्षण का आदेश दिया गया है। वेदों में वायु को अमृत कहा गया है। वायु जीवनीशक्ति देता है। इसको भेषज या ओषधि कहा गया है। यह प्राणशक्ति देता है और अपानशक्ति के द्वारा सभी दोषों को बाहर निकालता है। ऋग्वेद में कहा गया है कि हम ऐसा कोई काम न करें, जिससे वायुरूपी अमृत की कमी हो। यदि हम प्राणवायु को कम करते हैं तो अपने लिए मृत्यु का संकट तैयार करते हैं। ऋग्वेद में मन्त्र आया है कि-

वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभु नो हृदे। प्र ण आयूँषि तारिषत्।।
उत वात पितासि न उत भ्रातोत नः सखा।
स नो जीवातवे कृधि।।
यददो वात ते गृहे अमृतस्य निधिर्हितः। ततो नो देहि जीवसे।।

अर्थात् वायु हमारे हृदय के स्वास्थ्य के लिए कल्याणकारक आरोग्य कर औषधि को प्राप्त कराता है और हमारी आयु को बढ़ाता है। यह वायु हमारा पितृवत् पालक, बन्धुवत् धारक, पोषक और मित्रवत् सुखकर्ता है और हमें जीवन वाला करता है। इस वायु के घर अन्तरिक्ष में जो अमरता का निक्षेप भगवान द्वारा स्थापित है, उससे यह वायु हमारे जीवन के लिए जीवनतत्त्व प्रदान करता है। अथर्ववेद में मन्त्र आया है कि-

आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रपः।
त्वं हि विश्वभेषज देवानां दूत ईयसे

अर्थात् वायु के संचार से शरीर का मल निकलकर स्वास्थ्य मिलता है और तार, विमान, ताप , वृष्टि आदि का संचार होता है।

द्यु-भू संरक्षण- द्यु में सूर्य और अन्तरिक्ष आते हैं तथा भू में भूमि या पृथिवी। सूर्य ऊर्जा का स्रोत है, अंतरिक्ष वृष्टि करता है और पृथिवी ऊर्जा और वृष्टि का उपयोग करके मानवमात्र को अन्नादि देकर मानव जीवन को संचालित करती है। इस प्रकार द्यु-अन्तरिक्ष और भू ये तीनों परस्पर सम्बद्ध हैं। पृथिवी जल अग्नि या सूर्य समन्वित रूप में मानव जीवन का संचालन कर रहे हैं। यह संतुलन जब बिगडता है, तब विनाश की प्रक्रिया शुरू होती है। अतः वेदों में इनके संतुलन को सुरक्षित रखने के लिए आदेश दिए गए हैं। अनेक मन्त्रों में कहा गया है कि द्युलोक, अन्तरिक्ष और भूलोक को सभी प्रकार के प्रदुषणों से बचावें। अथर्ववेद में विशेष रूप से कहा गया है कि भूमि के मर्मस्थानों को क्षति प पहुँचावे। ऐसा करने से जल के स्रोत आदि नष्ट होते हैं और भू-स्खलन तथा भूकंप आदि की संभावना बढ़ती है।

जल को व्यर्थ न गवाएं- वेदों में जल की उपयोगिता और उसके महत्व पर बहुत बल दिया है। जल जीवन है, अमृत है, भेषज है, रोगनाशक है और आयुवर्धक है। जल को दूषित करना पाप माना गया है। जल के विषय में कहा गया है कि जल से सभी रोग नष्ट होते हैं। जल सर्वोत्तम वैद्य है। जल हृदय के रोगों को भी दूर करता है। जल को ईश्वरीय वरदान माना गया है। अनेक मन्त्रों में जल को दूषित न करने का आदेश दिया गया है। जल और वृक्ष वनस्पतियों को कभी हानि न पहुँचावें। पुराणों में तो यहाँ तक कहा गया है कि नदी के किनारे या नदी में जो थूकता है, मूत्र करता है या शौच आदि करता है, वह नरक में जाता है और उसे ब्रह्महत्या का पाप लगता है। ऋग्वेद में कहा गया है कि-

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तये। देवा भवत वाजिनः।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी इस मन्त्र का भाष्य करते हुए लिखते हैं कि हे विद्वानों! तुम अपनी उत्तमता के लिए जलों के भीतर जो मार डालने वाला, रोग का निवारण करने वाला अमृतरूप रस तथा जलों में औषध हैं उनको जानकर उन जलों की क्रियाकुशलता से उत्तम श्रेष्ठ ज्ञान वाले हो जाओ। यजुर्वेद के छठें अध्याय के 22वें मन्त्र में कहा गया है कि मापो हिंसीः अर्थात् जल को नष्ट मत करो।

वृक्ष-वनस्पतियों को बचाएं - वेदों और ब्राह्मण ग्रन्थों में वृक्ष वनस्पतियों का बहुत ही महत्त्व वर्णन किया गया है। वृक्ष वनस्पति मनुष्य को जीवनी शक्ति देते हैं और उसका रक्षण करते हैं। ओषधियाँ प्रदूषण को नष्ट करने का प्रमुख साधन हैं। इसलिए उन्हें विषदूषणी कहा गया है। वेद में वृक्षों को पशुपति या शिव कहा गया है। ये संसार के विष कार्बनडाईआक्साईड को पीते हैं और इस प्रकार ये शिव के तुल्य विषपान करती हैं और प्राणवायु या ऑक्सीजनरूपी अमृत देती हैं। अतः वृक्षों को शिव का मूर्तरूप समझना चाहिए। इसी आधार पर ऋग्वेद में वृक्षों को लगाने का आदेश है। ये जल के स्रोतों की रक्षा करते हैं। एक मन्त्र में कहा गया है कि वृक्ष प्रदूषण को नष्ट करते हैं, अतः उनकी रक्षा करनी चाहिए।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से सम्बन्धित सभी आर्य समाजों एवं शिक्षण संस्थाओं के अधिकारियों से निवेदन है कि लोगों को पर्यावरण की सुरक्षा के प्रति जागरूक बनाएं। इस वर्षा ऋतु में अपने आसपास खाली स्थानों पर पेड़-पौधे लगाएं और आने वाली पीढ़ियों का भविष्य सुरक्षित करें। शिक्षण संस्थाओं में पढ़ने वाले बच्चों को जल व्यर्थ न गवांने की प्रेरणा दें। अगर हम भविष्य में इंसान को सुरक्षित देखना चाहते हैं तो हमें स्वयं भी जगना होगा और दूसरों को भी जगाना होगा। पर्यावरण की समस्या को खत्म करने के लिए हमें वैदिक चिन्तन को आधार बना कर कार्य करना होगा। वेदों के अनुसार यदि हम वनस्पतियों, ओषधियों, वृक्षों तथा जल और वायु का संरक्षण करते हैं तो इस समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है। इनका संरक्षण न होने के कारण ही आज प्रदूषण की समस्या फैलती जा रही है, जल दूषित हो रहा है, शुद्ध वायु नहीं मिल रही है जिससे अनेक प्रकार की बीमारियां बढती जा रही हैं।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

पर्यावरण का व्यावहारिक पक्ष

ले.-डॉ. नरेश कुमार शास्त्री

पर्यावरण, शिक्षक और छात्र

पर्यावरण के प्रति जागरूकता के लिए स्कूल, कालेज विश्वविद्यालय तथा सामाजिक संगठन बहुत बड़ा कार्य कर सकते हैं। 'पर्यावरण-संरक्षण-संघ' जैसे संगठन बनाए जा सकते हैं। छात्रों के लिए कक्षा में पर्यावरण के सम्बन्ध में एक अतिरिक्त परन्तु अनिवार्य प्रश्नपत्र रखा जा सकता है जिसके ३० प्रतिशत अंक लिखित परीक्षा के लिए हों और ७० प्रतिशत अंक प्रैक्टिकल परीक्षा के हों। इस प्रैक्टिकल में शिक्षक अपने विवेक के अनुसार २०-२० छात्रों का ग्रुप बनाकर पर्यावरण के लिए लोगों में जागरूकता तथा स्वच्छता के लिए कालोनी या मुहल्ले आबंटित कर सकता है और उसी के आधार पर मूल्यांकन कर छात्रों को प्रैक्टिकल के अंक प्रदान कर सकता है। निश्चित रूप से इसके परिणाम सार्थक होंगे। पर्यावरण-सम्बन्धी पोस्टर बनने तथा उन्हें निर्धारित/आबंटित क्षेत्र में लगाने और वृक्षारोपण करने आदि को भी प्रैक्टिकल में शामिल किया जा सकता है।

शिक्षक यदि पूरी ईमानदारी से छात्रों को साथ मिलाकर इस कार्य को करें तो असफलता का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

पर्यावरण का प्राण-वृक्ष

प्रकृति में यद्यपि सभी कुछ महत्त्वपूर्ण है, लेकिन शरीर की रक्षा के लिए तथा प्रकृति रूपी गर्भ की रक्षा के लिए वृक्षों का महत्त्व सब से अधिक है। क्योंकि वृक्ष ही जल, वायु, पृथ्वी, आकाश और अग्नि-इन पांच तत्त्वों को प्रकृति में सन्तुलित करने का महान् कार्य करते हैं। इन पांच तत्त्वों से ही हमारा शरीर बना है और ये पांच तत्त्व ही मुख्य रूप से पर्यावरण के अंग है। अत: वृक्ष को पर्यावरण का प्राण करना अनुचित न होगा। एक वृक्ष अपने जीवन में आक्सीजन, फल, फूल, औषधि, आर्द्रता सन्तुलन, सौन्दर्य, धरती का संरक्षण, लकड़ी, गोंद, कागज़ आदि के रूप में करोड़ों रुपए की सुविधाएं प्रदान करता है। आश्चर्य है कि इतनी कीमती चीज़ को हम यों ही उजाड़ते चले जा रहे हैं, इसके संरक्षण और संवर्धन पर हमारा ध्यान इतनी देर बाद आया-'देर आयद दुरुस्त आयद।'

वृक्ष के इस सीमातीत महत्त्व को विचार करते हुए ही सम्भवत: भारतीय मनीषियों ने एक वृक्ष को दस पुत्रों के समान सुखकारक और उपकारक माना है-

दशकूप-समा वापी, दश वापी-समो ह्रदः।

दशह्रद-सम: पुत्रो, दशपुत्र-समो द्रुम:।।

वृक्षों के संवर्धन के सम्बन्ध में मेरा विचार है कि हम में प्राय: अधिकांश लोग अपना और अपने बच्चों का जन्म दिन मनाते हैं, विवाह की वर्षगाँठ मनाते हैं, अपने पूर्वजों के स्मृति दिवस मनाते हैं। हर वर्ष इन तथा ऐसे ही दूसरे यादगार के अवसरों पर क्यों न सड़क के किनारे या जहाँ उचित और अधिक उपयोगी समझें, वहाँ कम से कम एक पेड़ लगाने की परम्परा डाली जाए और उन पेड़ों के साथ भावनात्मक सम्बन्ध बनाकर उन्हें ज़िन्दा रखने की कोशिश भी की जाए। बच्चों द्वारा लगवाए पेड़-पौधों के साथ बच्चों को भावनात्मक रूप से जोड़ा जाए, जिससे उन पेड़-पौधों की रक्षा में वे स्वयं रुचि लें। ऐसा करने से प्रकृति के संरक्षण और संवर्धन को पर्याप्त सहयोग मिलेगा। यदि और कुछ नहीं तो घर में ही यादगार-अवसरों पर कोई नया तुलसी आदि का पौधा किसी गमले में लगा कर अपना प्रकृति-प्रेम प्रकट किया जाए। कुछ न करने से, कुछ कर लेना अच्छा है।

वृक्ष और कागज़

आंकड़े बताते हैं कि जंगलों का कटान सब से ज्यादा 'पेपर-पल्प' के लिए होता है। जिसमें वृक्षों के गुद्दे को काम में लाया जाता है। इस 'पेपर-पल्प' से ही कागज़ बनता है। शिक्षक-छात्र-व्यापारी सभी का सम्बन्ध कागज़ से है, शिक्षकों व छात्रों का विशेष रूप से। हम सभी को कागज़ का प्रयोग बहुत ही सन्तुलित होकर करना चाहिए। शिक्षकों द्वारा अपने-अपने शिक्षण-संस्थानों के छात्रों में इसके प्रति जागरूकता पैदा करनी चाहिए।

स्कूलों, कालेजों और विश्वविद्यालयों में कागज़ का अधूरा उपयोग करके अथवा बिना उपयोग किए ही बड़ी बेदर्दी से बड़े पैमाने पर कागज़ों का ढेर या तो आग की भेंट कर दिया जाता है, या उसे ग्राउण्ड में नाचने के लिए आज़ाद छोड़ दिया जाता है। कम्प्यूटर के बढ़ते प्रयोग के साथ ही कागज़ के दुरुपयोग को बलपूर्वक रोका जाना चाहिए तथा कागज़ के हर टुकड़े को इकट्ठा करके कागज़ को रि-साईकल करने वाले उद्योगों में पहुंचा देना चाहिए अथवा रद्दी इकट्ठे करने वालों को दे देना चाहिए, जिससे इस रद्दी द्वारा फिर से कागज़ तैयार किया जा सके। यदि हम ऐसा नहीं करते तो हम छिपे रूपों में पेड़ों के अधिक कटान को जानबूझ कर बढ़ावा देते हैं, जिससे सारा पर्यावरण-तन्त्र असन्तुलित और प्रदूषित होता है।

वृक्ष और पेयजल

प्रकृति ही ब्रह्म है, वृक्ष ही कल्याणकारी भगवान् शंकर है। वृक्ष का संरक्षण-संवर्धन ही भगवान् शंकर की वास्तविक पूजा है। वृक्षों की जड़ें ही भगवान् शंकर की जटाएँ हैं। इन जटाओं से ही पवित्र गंगा अर्थात् पेयजल का प्रवाह होता है। जल-संरक्षण और जल-शोधन दोनों में ही वृक्षों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। वर्षा से वृक्षों का सम्बन्ध तो सभी जानते हैं। शंकर की जटा रूपी वृक्षों की जड़ों में पानी के बहने से ही पानी पीने योग्य बनता है। अत: जल को ज्यादा से ज्यादा मात्रा में पेय बनाने के लिए ज्यादा से ज्यादा क्षेत्र में ज्यादा में ज्यादा वृक्ष लगाने चाहिये।

जल ही जीवन है। इसका संरक्षण भी बहुत जरूरी है।'हम नगर-निगम को प्रयुक्त जल का भुगतान करते हैं'-ऐसी मनोवृत्ति से हमें इस पेय जल का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। और न ही बिना जरूरत के पानी की टूटियों को खुला छोड़ना चाहिये। अपनी आदत में थोड़ा-सा परिवर्तन करके हम बड़ी आसानी से इस व्यर्थ जाने वाले पेयजल को सुरक्षित कर सकते हैं।

वृक्ष और प्राणवायु

प्राणियों के लिए प्राणवायु का सीधा सा अर्थ है-आक्सीजन। आक्सीजन ही ज्ञान-तन्तुओं का प्राण है। बुद्धि के चैतन्य के साथ आक्सीजन का सीधा सम्बन्ध है। यदि मनुष्य को उचित मात्रा में आक्सीजन न मिले तो न केवल उसका मानसिक विकास पूरी तरह रुक जाएगा, बल्कि उसकी विचारशक्ति और स्मृति दोनों का लोप भी हो जाएगा। आक्सीजन से शरीर में स्वाभाविक गर्मी पैदा होती है, उस गर्मी से ही शरीर की पाचन क्रिया चलती है, रक्त को नया जीवन मिलता है, शरीर में शक्ति-स्फूर्ति-कान्ति की वृद्धि होती है। इसी से शरीर में उत्पन्न विषों का नाश होता है।

मनुष्य आक्सीजन ग्रहण करता है और कार्बन-डाईआक्साईड गैस छोड़ता है। यह गैस कितनी खतरनाक है, इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि बन्द कमरे में कोयले की अंगीठी लगाकर सोने वाले लोग कई बार मरे हुए या बेहोश पाए जाते हैं। यह कार्बनडाईआक्साईड गैस के कारण ही होता है। प्राणियों के श्वास छोड़ने के अलावा यह गैस गन्दगी की सड़न, गन्दी नालियों, मिलों-फैक्ट्रियों के धुएं आदि से भी पैदा होती है। स्पष्ट है कि जनसंख्या बढ़ने से इस विषैली गैस में भी बढ़ोतरी होगी।

भगवान् शंकर विषपायी हैं। ये वृक्ष ही साक्षात् शिव हैं, जो कार्बनडाईआक्साईड गैस रूपी हलाहल को पीकर प्राणीमात्र के कल्याण के लिए आक्सीजन गैस रूपी अमृत का निरन्तर प्रवाह करते हैं। जितने अधिक वृक्ष उतनी अधिक प्राणवायु और जितना अधिक प्राणवायु उतना ही स्वस्थ और लम्बा जीवन। अत: इसके लिए एक ही समाधान सूत्र है-जनसंख्या वृद्धि में लगातार कमी हो और साक्षात् शिव अर्थात् पेड़ों का लगातार संरक्षण और संवर्धन हो।

प्रकृति का मानवीकरण और सहृदयता

वृक्षों के कटान के साथ साथ पर्वतों का कटान व खानों का खुदान भी अपनी चरमसीमा पर है। इससे भी प्रकृति में असन्तुलन पैदा होता है। इस पर अंकुश लगाने के लिए हमें प्रकृति का मानवीकरण अपने दिलों में करना चाहिए, जो अभी तक केवल साहित्य की किताबों में ही मिलता है। प्रकृति पर किया जा रहा हर घाव हमें ऐसा लगना चाहिए, मानो वह घाव हमारे शरीर पर ही हो रहा है-यह सहृदयता का भाव ही हमें प्रकृति के प्रति पूर्ण प्रेम दे सकता है।

वायु प्रदूषण और धुआं

आज गांव और शहर दोनों ही जहरीले धुएं के शिकार हो रहे हैं। यह धुआं फैक्ट्रियों की चिमनियों से निकलता है या स्कूटर-मोटर-कार आदि वाहनों से निकलता है। बीड़ी-सिगरेट आदि पीने वाले भी इस धुएं में कोई कम बढ़ौतरी नहीं करते। फैक्ट्रियों के धुएं पर नियन्त्रण आम आदमी की पहुंच से बाहर है, लेकिन व्यक्तिगत वाहनों और बीड़ी-सिगरेट के धुएं से हम बहुत सीमा तक छुटकारा पा सकते हैं। दो-तीन फर्लांग की दूरी तय करने में भी

(शेष पृष्ठ 7 पर)

"मित्रता निभाने का उच्चतम उदाहरण"

ले.-पं. खुशहाल चन्द्र आर्य C/o गोबिन्द राय आर्य एण्ड सन्ज १८० महात्मा गान्धी रोड़, (दो तल्ला) कोलकत्ता-700007

जब हम भारत के स्वर्णिम इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं तो हमें मित्रता निभाने के अनेकों उदाहरण मिलते हैं जिनमें कृष्ण-सुदामा का उदाहरण मुख्य रूप से प्रचलित है। परन्तु इससे भी कहीं बढ़कर रामायण में एक घटना आती है जिसको जानते तो अधिकतर लोग हैं परन्तु वह ऐसे ढंग से प्रस्तुत की गई है जिससे इसका प्रभाव कम पड़ता है और उदाहरण के रूप में प्रस्तुत नहीं की जाती, जबकि वह घटना उदाहरण के रूप में पेश करने योग्य है। घटना इसी भाँति हैं:-

जब रावण सीता माता को कुटिया में अकेली देखकर साधु का वेश बदल कर भिक्षा माँगने के बहाने सीता के पास आया। सीता ने जैसे ही भिक्षा देने के लिए हाथ बढ़ाया तो उसने हाथ पकड़ कर अपनी विमान में बिठा लिया जो रावण ने इधर-उधर छिपा कर खड़ा कर रखा था। रावण जब सीता को विमान में बिठा कर ले जा रहा था। प्राचीन भाषा में विमान को उड़नखटौला कहा जाता था, उसी में बिठाकर ले जा रहा था। सीता रोती-चिल्लाती जा रही थी। वह रोती हुई कह रही थी कि कोई मुझे बचाओ! कोई मुझे बचाओ!! उसी आवाज़ को सुनकर एक परम वीर व साहसी व्यक्ति जिसका नाम जटायु था, उसने यह आवाज़ सुनी और समझ गया कि यह आवाज़ मेरे परम् मित्र राजा जनक की दुलारी बेटी सीता की है और दुष्ट रावण उसे हरण करके ले जा रहा है। जटायु ने विचारा कि यह समय है कि अपने परम् मित्र के साथ मित्रता का फर्ज निभाने का। वह यह भी जानता था कि तुम रावण से युद्ध करके जीत नहीं सकोगे, फिर भी उसने अपने जीवन की बाजी लगाकर रावण से युद्ध करने की ठान ली जिससे सीता को बचाया जा सके। जटायु ने अपना विमान रावण के पीछे लगा दिया और उसके विमान को घेरकर उसे नीचे उतारने के लिए विवश कर दिया। जब रावण ने विमान को धरती पर उतार दिया, तब जटायु ने सीता को छोड़ देने की बात कही। और कहा कि बिना युद्ध किये सीता को ले जाने नहीं दूँगा। रावण भी वीर था, उसको ऐसी धमकी कैसे सहन हो सकती थी। दोनों का भीषण युद्ध हुआ। रावण, जटायु से काफी बलशाली था। उसने जटालु के हाथ-पैर काट कर जमीन पर डाल दिया और स्वयं सीता को विमान में बिठाकर लंका की तरफ चला गया। (नोट:-तुलसीकृत रामायण में जटायु को पक्षी बताया गया है और रावण ने जटायु के पंख काटकर वही गिराकर सीता को ले गया लिखा है। परन्तु यह भूल है, जटायु नाम का एक वीर, साहसी मनुष्य था जो राजा जनक का परम् मित्र था। उसने अपनी मित्रता का फर्ज निभाने के लिए सीता को बचाने के लिये रावण जैसे बलशाली राक्षस से युद्ध किया था, परन्तु रावण अधिक बलशाली होने से जटायु के हाथ-पैर काट कर वहीं जमीन पर डाल कर सीता को ले गया। जटायु पक्षी नहीं मनुष्य था, यह बतलाने के लिए मैंने यह लेख लिखा है)।

इधर जब राम, सीता के चले जाने के दु:ख में विलाप करते हुए भाई लक्षमण के साथ सीता की खोज करते हुए जा रहे थे, तब उनकी भेंट जटायु से हुई और उसमें ऐसी स्थिति होने का कारण पूछा। जटायु ने कहा कि परम् मित्र राजा जनक की दुलारी बेटी सीता को रावण हरण करके ले जा रहा था। मैंने अपने मित्रता के कर्त्तव्य को निभाने के लिए उसको ले जाने से रोका। दोनों का भयंकर युद्ध हुआ, परन्तु वह मुझ से बहुत अधिक बलशाली था, उसने मेरे हाथ-पैर काटकर मुझे इस स्थिति में छोड़कर रोती हुई सीता को घसीट कर विमान में बिठा कर लंका की तरफ चला गया। इतना कहते ही जटायु के प्राण-पखेरू उड़ गये और वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। राम ने जटायु की यह बात सुनकर, उसके मित्रता के कर्त्तव्य को निभाने की हृदय से प्रशंसा की तथा उस महामानव के प्रति अपने हृदय से आभार व्यक्त किया और उसका वैदिक रीति से अच्छी प्रकार अन्तिम संस्कार दिया।

जटायु से उनको यह तो ज्ञात हो ही गया कि सीता को रावण ही हरण करके लंका में ले गया है, तब वे दु:खित मन से लंका की तरफ आगे बढ़े। तब सुग्रीव और हनुमान किष्किन्धा पर्वत पर बैठे बातें कर रहे थे तभी सुग्रीव की नज़र उन दोनों भगवे वस्त्र पहने उन राम और लक्ष्मण पर पड़ी। सुग्रीव ने अपने भाई बाली के भेजे हुए इस वेश में मेरा पता लगाने आ रहे हैं समझ कर हनुमान जी को उन बनवासी वेश वालों को यह जानने के लिए कि ये कौन हैं? पर्वत से नीचे उनसे मिलकर बात-चीत करने के लिए भेजा। बातचीत में राम और लक्ष्मण की मित्रता सुग्रीव से हो गई और उन्होंने सुग्रीव को सहयोग करने की कही।

आगे का इतिहास तो सभी जानते हैं कि राम ने बाली को किस प्रकार मारा और वानर (जो उस समय इन जंगलों में रहने वाली एक मनुष्यों की ही जाति थी, इसी जाति के सुग्रीव, बाली, अंगद और हनुमान भी थे। इनको बन्दर कहा जाता है लेकिन ये बन्दर नहीं थे, वरन् वानर जाति के मनुष्य ही थे, इनको बन्दर कहना गलत है) उस वानर जाति की एक सेना बनाकर राम ने रावण से युद्ध किया और रावण को उसके पूरे परिवार के साथ मार कर किस प्रकार सीता को प्राप्त किया और चौदह वर्ष पूरे होने पर राम, लक्ष्मण और सीता के साथ किस प्रकार अयोध्या आये। यह इतिहास तो सब जानते हैं।

मेरा यह लेख लिखने का अभिप्राय तो यही है कि रामायण में आये जटायु की सही स्थिति की जानकारी देना जो मैं ऊपर दे कर आ चुका हूँ कि जटायु कोई पक्षी नहीं था बल्कि जटायु नाम का एक व्यक्ति था जिसने सीता को बचाने के लिए रावण से युद्ध किया था। दूसरी बात यह है कि तुलसी कृत रामायण में बाली, सुग्रीव, अंगद और हनुमान जी को बन्दर कहा गया है। ये भी बन्दर नहीं थे बल्कि उस समय जगलों में वानर नाम की एक मनुष्य जाति रहती थी। वे वानर जाति के होने से लोग उनको बन्दर कहने लगे परन्तु वास्तव में वे बन्दर नहीं थे, वानर जाति के मनुष्य ही थे। इसका भी संक्षिप्त वर्णन मैंने ऊपर कर दिया है।

आशा है ये दोनों बातें सुधि पाठक गण अच्छी प्रकार समझ गये होगे जिससे मेरा परिश्रम सफल होगा और लेख की सार्थकता बढ़ेगी। इसी भावना के साथ लेखको यहीं विराम देते हैं।

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

सत्य तथा उसके अवरोधक

ले.-इन्द्रजित् देव-यमुनानगर

संसार में सबसे कम अल्पसंख्यक व्यक्ति वे होते हैं जो सत्यप्रिय होते हैं। सत्य होता तो सबके लिए है परन्तु अधिकतर लोग उसकी आवश्यकता अनुभव नहीं करते। न ही उसकी रक्षा व प्रचार-प्रसार में क्रियात्मक कुछ करते हैं। जिस दिन सब लोग सत्य की आवश्यकता तथा इसके लाभों को गहराई से अनुभव कर लेंगे, उसी दिन सुख व शान्ति के साम्राज्य की स्थापना हो जाएगी परन्तु इस दृढ़ सत्य के बावजूद सत्य की स्थापना अधिकांशत: नहीं हो रही। क्यों नहीं हो रही, इस सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ''सत्यार्थ प्रकाश'' में सुस्पष्ट प्रकाश डाला है। वे इस ग्रन्थ की भूमिका में लिख गए हैं-

''जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मत वाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है। इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता। इसीलिए विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें। पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझकर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।

''मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है, तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है।''

महर्षि ने सत्य को ग्रहण न करने के चार कारण लिखे हैं-अपने प्रयोजन अर्थात् स्वार्थ की सिद्धि, हठ अर्थात् अपने विचार पर ही दृढ़ बने) रहना, दुराग्रह अर्थात् अपने मत के ठीक सिद्ध न होने पर भी उसी पर अड़े रहना तथा अविद्या अर्थात् शिक्षा आदि के द्वारा न उपार्जित या अप्राप्तज्ञान। इन चारों में से कोई एक-न-एक कारण अवश्य उन लोगों पर लागू होता है जो सत्य को स्वीकार नहीं करते। इन में चौथे क्रम में उल्लिखित अर्थात् अविद्या के कारण जो लोग सत्य को नहीं जानते-मानते, उन्हें यदि विद्या दी जाए, पुरुषार्थ करके वह ज्ञान प्राप्त कर लें तो यह सम्भव है कि वह शिक्षित हो जाने पर सत्यासत्य को जान लेंगे। आज भले ही वे सत्य को स्वीकार नहीं कर रहे तो भी उन्हें शिक्षित करके कोई शिक्षित व ज्ञानी व्यक्ति सत्य का ज्ञान करा सकता है है तथा वे कालान्तर में सत्य के ज्ञाता हो सकते हैं। असत्य का परित्याग करके वे सत्याग्रही बन सकते हैं। ऐसे व्यक्तियों के प्रति हमारी सहानुभूति व सहयोग रहेगा तो किसी-न-किसी दिन अवश्य ही असत्यवादियों, असत्यकारियों तथा असत्यमानियों की सूची से पृथक् होने में उद्यत रहेंगे। शेष तीनों प्रकार के लोगों में से एक भी प्रकार के लोग कभी सत्य को स्वीकार नहीं करेंगे क्योंकि उनकी विवशताएं हैं, सीमाएं हैं। स्वार्थों, व दुराग्रहों से वे अपना दामन छुड़ाना नहीं चाहते। उन्होंने इनसे स्वयं को बांध रखा है तथा वे उन बन्धनों से तलाक लेने की इच्छा नहीं रखते, न ही प्रयत्न करते हैं। सत्य से परे रहने वाले ऐसे लोगों पर तरस आता है।

कुछ मन को मनाने में लगे रहते हैं,
कुछ तन को सजाने में लगे रहते हैं,
कुछ धन को कमाने में लगे रहते हैं।
सत्य को तो वही लोग समझेंगे कि जो-
कुछ करके दिखाने में लगे रहते हैं।

सत्य के विषय में ईशोपनिषद् १५ में कहा गया है-

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्य अपिहितम् मुखम्।
तत् त्वं पूषन् अपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।।

The face of truth is covered with a golden bidunveil, O pushan (Forterest), so that we may see the truth and follow it. अर्थात्, ''हे प्रभो! संसार की सुवर्णमय चकाचौन्ध के ढकने से आपका ठीक-ठीक स्वरूप मेरे लिए ढका हुआ है। मेरी आप से प्रार्थना है कि सत्य के दर्शन के लिए सत्य को ढकने वाले इस आवरण को हे पूषणा! हटा दीजिएगा।'' अमृत अर्थात् सत्य, धर्म के मार्ग में बाधक है हिरण्मय पात्र, भौतिक सुख-समृद्धि की। इन में बहुत आकर्षण है। संसार की चकाचौन्ध में, चमक-दमक में, भौतिक सुख-सुविधाओं में मुग्ध होकर हम भूल जाते हैं कि चमकने वाली प्रत्येक वस्तु स्वर्ण नहीं होती। All that glitters are not gold. स्वार्थी लोग सत्य को ढका ही रहने देना चाहते हैं। लौकिक कीर्ति, यश, पद, प्रतिष्ठा, मान-मर्यादा के चक्र में मनुष्य धर्म और सत्य की उपेक्षा करते हुए अनेक झूठ बोलता है, असत्य कार्य करता है। इसे ही महर्षि ने पूर्वो लिखित ''अपने प्रयोजन की सिद्धि' लिखा है।

दीपावली के आसपास पटाखे खूब बिकते हैं। इन्हें बनवाने व बेचने वाले भलीभान्ति जानते हैं कि इनका चलाना वैज्ञानिक दृष्टि से हानिकारक है। वायु प्रदूषण इनसे होता है व कोई दुर्घटना भी हो सकती है परन्तु फिर भी वे इन्हें बनाते तथा बेचते हैं। क्यों? धन कमाना ही उनका उद्देश्य रहता है। इसी प्रकार शराब बेचने वाला ठेकेदार शराब बेचता है, धन कमाने के लिए। वह जानता है कि यह पदार्थ पीने वाले के धन; स्वास्थ्य व प्रतिष्ठा के लिए हानिकारक है परन्तु फिर भी खुले आम इसे बेचता रहता है। यह भी संभव है कि इसकी हानियाँ जानकर स्वयं इसे न पीता हो किन्तु धन के लोभ में इसे बेचता रहता है। मूर्तिपूजा कराने वाला पौराणिक पण्डित जानता है प्राण प्रतिष्ठा के कथित मंत्र बोलकर मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा नहीं कर सकता परन्तु फिर भी वह यह प्रचार करता है कि इस मूर्ति में अब प्राण आ गए है अर्थात् यह सजीव हो गई है। इसकी पूजा किया करो। वह यह भी जानता है कि मूर्ति ईश्वर नहीं है परन्तु वह मूर्ति की पूजा को ईश्वर की पूजा कहकर धन-सम्पत्ति एकत्रित करता है। उसका अपना स्वार्थ व प्रयोजन है। हिसार के निवासी स्व. सीताराम आर्य ने एक घटना सुनाई थी। उसके अनुसार एक बार हिसार में पौराणिक शास्त्रार्थ महारथी माध्वाचार्य आया था व अपने प्रवचनों में महर्षि दयानन्द के विरुद्ध व मूर्ति पूजा के पक्ष में ही बोलता था। सीता राम जी उसके भाषणोपरान्त उससे बात करने उसके कमरे में गए, जहां वह ठहरा था। सीताराम जी ने उस की असत्य बातों विषयक वैदिक विचार रखे व पूछा कि आप मूर्ति पूजा के पक्ष में तथा महर्षि दयानन्द के विरुद्ध ही अधिक क्यों बोलते हैं? माध्वाचार्य ने उत्तर में कहा-मैं-महर्षि दयानन्द के विरुद्ध जितना अधिक बोलता हूँ, मेरे भक्त मुझे उतनी ही अधिक दक्षिणा देते हैं।'' इसे ही कहते हैं सत्य सोने के ढक्कन से ढका है। स्वार्थी लोग उसे ढका ही रखना चाहते हैं। इस में उनका निजी प्रयोजन है, स्वार्थ है। सन् 1869 में काशी में ''वेदों में मूर्ति पूजा का आदेश नहीं है,'' इस विषय पर 32 पौराणिक विद्वानों से शास्त्रार्थ हुआ था जिसमें महर्षि विजयी हुए थे तो पौराणिक पंडितों के मुखिया विशुद्धानन्द ने किसी को कहा था-दयानन्द कहता तो ठीक है कि वेदों में मूर्ति-पूजा का आदेश नहीं है परन्तु वह यह कह सकता है क्योंकि वह संन्यासी है। हम गृहस्थी ऐसा नहीं कह सकते।

वितैषणा ही नहीं, पुत्रैषणा व लोकैषणा भी मनुष्य को सत्य से विमुख करती है। आचार्य श्रीराम शर्मा मथुरा आर्य समाज का प्रधान रहा है। उसने दल बदल कर 'गायत्री परिवार' नामक संस्था बना ली जो आज चल रही है। तब मथुरा आर्य समाज के मन्त्री स्व० प्रेमभिक्षु जी ने उन्हें एक लम्बा पत्र लिखकर इसका कारण पूछा पर श्रीराम शर्मा ने उत्तर न दिया। 'गायत्री परिवार' में उसकी खूब पूजा होने लगी थी व धन सम्पत्ति भी बहुत हो गई। वहाँ जाकर उन्होंने गायत्री की मूर्ति स्थापित व पूजित करा दी। सुधांशु जी 'महाराज' व स्वामी सत्यानन्द का भी लगभग ऐसा ही इतिहास है।

वर्तमान राजनीति का दारुण दारिद्र्य यह है कि वह केवल वोट मांगती है क्योंकि राजनीति में पद, प्रतिष्ठा, सुविधा, अवसर व धन की अपार संभावनाएं हैं। वोट के भिखारी कभी सत्य के पुजारी नहीं हो सकते। पांखण्डी गुरुओं की शरण में जाकर उनके आगे नतमस्तक हो उनका आशीर्वाद लेते हैं। निजी मान्यताओं को परे रखकर प्रत्येक राजनेता उस-उस सम्प्रदाय के कार्यक्रमों में जाकर उनके कार्यों की प्रशंसा इसलिए करता है ताकि उनसे वोटों का 'प्रसाद' मिल सके। सत्य सिद्धान्तों से उनका कुछ लेना देना नहीं होता।

सत्य को छोड़कर असत्य की ओर झुक जाने का दूसरा कारण महर्षि ने हठ लिखा है। व्यक्ति या संगठन का किसी बात के लिए जिद करना अर्थात् हानि-लाभ व सत्य-असत्य का विचार किए बिना अपनी बात पर अड़े रहना या आग्रह करना। इतिहास में ऐसे अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं। वर्तमान में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का व्यवहार हमारे समक्ष है। उसकी शाखाओं में ध्वज के सामने खड़े होकर उसके स्वयं सेवक जो प्रार्थना बोलते हैं, उसके आरंभिक शब्द इस प्रकार है-'नमस्ते सदा वत्सले मातृ भूमे।' अर्थात् हे मातृभूमि! तुम्हें मैं नमस्ते करता हूँ। नमस्ते अभिवादन करने का सार्वदेशिक सर्वश्रेष्ठ व अर्थ की दृष्टि से सही व प्राचीन शब्द है। आधुनिक इतिहास में इसे आर्य समाज ने पुनर्प्रतिष्ठित किया है और अब अभिवादन के लिए दूर-दूर तक प्रचलित हो गया है पर उपरोक्त संगठन वाले लोग परस्पर मिलने पर नमस्ते के स्थान पर नमस्कार शब्द ही बोलते हैं। वे नमस्ते अपनी प्रार्थना में बोलने को ठीक समझते हैं परन्तु लाख बार समझाने पर भी वे परस्पर मिलने पर नमस्कार ही बोलते हैं। व्याकरण से उन्हें कुछ सरोकार नहीं। उन्हें यह हर आर्य समाज से स्वयं को पृथक् सिद्ध करने हेतु करना ही है। वास्तविकता यह है कि नमस्कार नम: कार का अर्थ हुआ नमन किया परन्तु नम: अथवा नमस्कार में विधेय और उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती

(शेष पृष्ठ 7 पर)

पृष्ठ 4 का शेष-पर्यावरण का व्यावहारिक पक्ष

हम स्कूटर-कार का प्रयोग करते हैं, शायद ऐसा करना हमारे फैशन में आ गया है या हमारे स्टेटस की बात बन गई है, लेकिन केवल पैशन के लिए या दिखावटी स्टेटस् के लिए वाहनों का प्रयोग धीमी-गति की आत्महत्या के समान है और धूम्रपान भी ऐसी ही आत्महत्या है- इन दोनों के प्रयोग से व्यक्ति स्वयं तो ज़हर पीता ही है, दूसरों को भी ज़हर पीने के लिए मजबूर करता है। अत: फैशन या स्टेटस मात्र के लिए वाहनों के प्रयोग तथा धूम्रपान से यथासम्भव बचना चाहिए। अधिक से अधिक पैदल चलने या साईकिल के उपयोग को पहल देनी चाहिए। इससे वायुमण्डल भी दूषित नहीं होगा और स्वास्थ्य लाभ भी मुफ्त में मिलेगा। चीन की अपेक्षा भारत का वायुमण्डल अधिक दूषित है, जबकि चीन की जनसंख्या भारत से अधिक है। उसका एक ही कारण है, वह यह कि चीन के लोगों ने अपने दैनिक जीवन में डीजल या पैट्रोल से चलने वाले वाहनों के स्थान पर साईकल चलाने की संस्कृति को अपनाया है। हमें साईकल चलाने में शर्म क्यों महसूस होती है?

सारभूत बात यह है कि वायुमण्डल को धुएं रहित बनाने में, डीजल/पैट्रोल से चलने वाले वाहनों का उपयोग न करके तथा धूम्रपान न करके, हम व्यक्तिगत रूप में बहुत बड़ा योगदान कर सकते हैं, जो समय की आवश्यकता है।

ध्वनि-प्रदूषण

अन्य प्रदूषणों के साथ-साथ ध्वनि-प्रदूषण की भी एक ज्वलन्त समस्या है। यदि वाहनों का प्रयोग कुछ कम हो जाए, तो बहुत सीमा तक ध्वनि-प्रदूषण की समस्या स्वयं सुलझ सकती है। वाहनों में प्रैशर-हार्न के प्रयोग पर तो पूरी तरह पाबन्दी लगाई जानी चाहिए।

इसके अतिरिक्त धार्मिक स्थलों, धार्मिक या राजनैतिक कार्यक्रमों, सार्वजनिक सभाओं आदि में जो हाई पावर लाउड्-स्पीकरों का प्रयोग होता है, उस पर भी पाबन्दी लगाई जानी चाहिए। यह पाबन्दी सरकार की ओर से नहीं बल्कि स्वयं जनता की ओर से होनी चाहिए। धार्मिक सभाओं और दूसरी जनसभाओं में लाउड्-स्पीकर की आवाज़ केवल उतनी ही रखी चानी चाहिए, जिससे उस जनसभा में बैठे लोग सुविधापूर्वक सुन करें। शोर करने के लिए या सड़क पर चलते राहगिरों को सुनाने के लिए लाउड्-स्पीकरों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। अपने घर आदि में भी अपने टी.वी., रेडियो, टेपरिकार्डर आदि हमें धीमी आवाज़ में सुनने चाहिए। ऐसा करके हम बहुत सीमा तक ध्वनिप्रदूषण से अपने पर्यावरण को बचा सकते हैं।

स्वच्छता का आत्मबोध

हमें अपने और अपने सामाजिक परिवेश में साफ सफाई की ओर विशेषरूप से आन्तरिक बोध पैदा करना चाहिए। हम घर में हों या घर से बाहर यात्रा में, सड़क पर हों या किसी सार्वजनिक स्थान पर-प्रत्येक जगह और हर समय हमें अपने आस-पास की स्वच्छता का खास ध्यान रखना चाहिए। विशेष रूप से इस दृष्टि से कि कहीं हमारे कारण तो कोई गन्दगी नहीं फैल रही। इसके लिए फलों-मूंगफली आदि के छिलकों को हम यों ही इधर-उधर न फैंके, उन्हें कूड़ादान तक पहुंचाने की भरसक कोशिश करें। पोलीथिन के लिफाफे कम से कम संख्या में उपयोग करें। यदि उपयोग करने ही पड़ें तो उनका दुबारा प्रयोग हो सके, ऐसा यत्न करना चाहिए। उन्हें पानी की नालियों, गटर, सड़क या उपजाऊ भूमि पर न फैंके। बाजार से सामान आदि लाते समय कपड़े या जूट के थैलों का प्रयोग करें। घर के कूड़े को भी घर के बाहर रास्ते में ही न फैंके, बल्कि कूड़े के लिए बने उचित स्थान पर ही सावधानी से डालें। ऐसा करने से अपने आस-पास के वातावरण को स्वच्छ रखने में न केवल सहायता ही मिलेगी बल्कि पर्यावरण को स्वच्छ रखने की हमारी मनोवृत्ति भी और मज़बूत होगी।

पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त करने के लिए ये कुछ व्यावहारिक पक्ष प्रस्तुत किए हैं। जब हमारी दृष्टि इस दिशा में व्यवहार करने लगेगी तो और भी ऐसे ही बहुत से रास्ते हमारे सामने अपने आप उभर कर आएंगे, जिन रास्तों पर चलकर हम पर्यावरण को प्रदूषण रहित बनाने में अपने व्यक्तिगत व्यवहार से महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे। प्रदूषण-मुक्त पर्यावरण तैयार करने के लिए हमारा आचरण और व्यवहार ही पहला और अन्तिम साधन है। आओ हम इस दिशा में पूरे उत्साह और रुचि से जुट जाएं।

पृष्ठ 2 का शेष-यज्ञ से पूर्व शुद्धि

यज्ञ सामग्री करो सुरक्षित, प्रति यजमान को देने हित।
बार बार न लिखना होगा, करेगा शेयर याज्ञिक होगा।।
यज्ञ दक्षिणा पण्डित जी को देना, चरण छूकर आशीष है लेना।
करबद्ध नसमस्ते उनको करना, विदा उन्हें सहर्ष है करना।
करे अतिथियों का भी धन्यवाद, बना रहे आप सभी का आशीर्वाद।
'वेद' का भी आशीष यही है, बनी रहे प्रभु कृपा चाह यही है।।

विशेष कथन-अतिथ्य सेवा-सत्कार-स्वागत में अत्यधिक व्यस्त होने के कारण विमलेश जी पण्डित जी को दक्षिणा देना भूल गई। चिरप्रतीक्षा के पश्चात् मैंने उन्हें स्मरण कराना ही उचित समझा। अत: उनकी कविता में अन्तिम चार पंक्तियां मेरे द्वारा रचकर उन्हें प्रेरणा दी गई है। आशा है अन्यथा न समझेंगी।

पृष्ठ 6 का शेष-सत्य तथा उसके अवरोधक

अर्थात् यह नमन व आदर-सत्कार किसका किया जा रहा है, उसका 'नमस्कार' में अभाव है। नमस्ते में प्रयुक्त ते से इसकी पूर्ति होती है। अत: अभिवादन करते समय नमस्ते शब्द का प्रयोग ही उचित है परन्तु उचित-अनुचित का विचार न करके अपनी बात पर अड़े रहने वाले लोग कभी सत्यनिष्ठ नहीं हो सकते।

तीसरा कारण दुराग्रह भी सत्य के मार्ग में बाधक है। यह दु: व आग्रह के मेल से बना शब्द है। आग्रह का अर्थ हठ, बल, ज़ोर तथा आवेश है तथा दु: का अर्थ बुरा। बुरा हर अर्थात् दुराग्रह। आप इसे आज आंतकवाद के रूप में देख सकते हैं। इस्लाम मतानुयायी यह मानकर नर-संहार करना भी पुण्य कार्य समझते हैं कि इससे जन्नत (स्वर्ग) व उसके सुख मिलेंगे। यह धर्म है व सत्य का मार्ग है। हमारी मान्यताएं ही सच्ची है तथा इनको न मानने वाले लोगों की हत्या करना बड़े पुण्य का कार्य है। परस्पर बैठकर संवाद स्थापित करके तर्क व युक्तियों से सत्य धर्म का निर्णय करना उन्हें अभीष्ट नहीं है तथा अपने असत्य विचार को लेकर संसार में अपना राज स्थापित करना चाहते हैं।

जो भी दुराग्रह के उदाहरण मिलते हैं। हर युग में दुराग्रह मिलता है व इसको चुनौती भी हर युग में दी गई है। गेलिलियो ने जब सिद्ध किया कि पृथ्वी गोल है, तो उसे जेल में डाल दिया गया। ब्रूनो को आग में जला दिया गया था। धर्म व राज-शक्ति उन पर टूट पड़ी क्योंकि दोनों शक्तियों के पीछे बाईबल का यह दुराग्रह ही था कि धरती चपटी है। मंसूर को शूली पर चढ़ाया गया। सुकरात व दयानन्द को विष देकर मारा गया क्योंकि इनके समयों की राजशक्ति या समाज शक्ति का असत्य के साथ गहरा दुराग्रह रहा। ये सभी बलिदानी सत्याग्रही दुराग्रह की ही भेंट चढ़े थे।

असत्य की ओर झुकने वाले चौथी व अन्तिम प्रकार के लोग, वे होते हैं, जो अविद्या से ग्रस्त होते हैं। हमें ऐसे लोगों पर तरस आता है, जो अविद्या अर्थात् अज्ञान के कारण सत्य से दूर होते हैं। उन्हें कभी किसी ने सत्य का बोध नहीं कराया तथा इसी कारण वे असत्य=अज्ञान= अविद्या का शिकार होकर अन्ध विश्वासों, पाखंड़ों, आडम्बरों, ढोंगों व गुरुडम में फँस जाते हैं। स्वार्थी व चतुर लोग इनका मानसिक, शारीरिक, आर्थिक तथा समाजिक शोषण करते हैं। ऐसा करना उनके लिए सरल होता है। चतुर लोग भड़े-बकरियों की भान्ति सत्य से अनजान लोगों को हाँक ले जाते हैं क्योंकि तर्क व प्रमाण का नादान लोगों का दूर का भी सम्बन्ध नहीं होता जबकि मनु महाराज के अनुसार तर्क से धर्म अर्थात् सत्य का अनुसंधान करने वाला व्यक्ति ही धर्म (=सत्य) को जानता है, अन्य नहीं-

यस्तर्केणानुसन्धन्तेस धर्म वेद नेतर:। मनुस्मृति १२/१०६

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज के अष्टम नियम में यह कहा था-''अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।''

पूर्वोक्त अपने स्वार्थ (= प्रयोजन) में लीन, हठी व दुराग्रही लोगों की बजाए हमें अधिक ध्यान, प्रयत्न, समय व साधन उन लोगों को सत्याग्री बनाने में लगाने चाहिए जो अविद्या के कारण असत्य की ओर झुक जाते हैं क्योंकि उनके सत्य के ग्रहण करने की संभावना शेष तीन प्रकार के लोगों की अपेक्षा अधिक होती है। प्रत्येक आर्य का यह परम कर्त्तव्य है कि वह अवपने परिचितों अपरिचितों को अज्ञानी न रहने दे क्योंकि अविद्या, अन्याय तथा अभाव संसार के इन तीन प्रकार के भयङ्कर शत्रुओं में सबसे विकट शत्रु अविद्याया अज्ञान ही है। पतञ्जलि ऋषि के अनुसार अविद्या अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश, इन चार प्रकार के क्लेशों की क्षेत्र=प्रसवभूति=उत्पत्ति का स्थान है। अर्थात् अस्मितादि चारों क्लेश अविद्या की सत्ता से रहते हैं तथा न रहने से नहीं रहते।

अविद्या क्शवेत्रमुत्तरेषां-प्रसुप्तत-नुविच्छिन्नोदाराणाम् योगदर्शनम् १/४

अत: हमें ''अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि'' करने में प्रयत्न करते रहना चाहिए।

वेदवाणी

प्रभो! तेरी कृपा का एक कण

दिवो नु मां बृहतो अन्तरिक्षादपां स्तोको अभ्यपप्तद् रसेन।
समिन्द्रियेण पयसाहमग्ने छन्दोभिर्यज्ञैः सुकृती कृतेन।।

-अथर्व० ६।१२४।१

ऋषि-**अथर्वा**।। देवता-**दिव्या आपः**।। छन्दः-**त्रिष्टुप्**।।

विनय-हे महान् प्रभो! हम अज्ञ मनुष्य अपनी तुच्छ कामनाओं को यूँ ही इतना भारी समझा करते हैं। हम मनुष्यों को जिस समय जो कामना होती है, उसे हम इतना अधिक महत्त्व देते हैं कि हम समझते हैं यदि हमारी वह इच्छा पूरी न हुई तो हम मर जाएँगे और यदि पूरी हो गई तो सदा के लिए उससे निहाल हो जाएँगे-मानो फिर हमें कुछ कामना ही न रहेगी, परन्तु हम अपनी इच्छाओं को इतना महत्त्व इसीलिए देते हैं, क्योंकि हम तुम्हारे अनन्त महत्त्व को अनुभव नहीं करते। हम यह अनुभव नहीं करते कि तुम तो जल के अपार समुद्र हो और हमारी प्रबल-से-प्रबल प्यास को (जिसके मारे हम मरे जाते हैं) एक लुटियाभर पानी से बुझा सकते हो। नहीं, तुम तो तुष्टियों के बरसाने वाले, सब ओर पैले हुए असीम अन्तरिक्ष हो और तुम हमें अपनी इस अनन्त वृष्टि में से केवल एक बूँद ही देकर तृप्त कर सकते हो-छका सकते हो। तुम्हारे दिव्य ज्ञानमय बृहद् आकाश से बरसाने वाले ज्ञान-बिन्दुओं में से एक बूँद में ही वह रस है, वह शक्ति है कि हम उन ज्ञान-बिन्दुओं को ही पाकर परितृप्त हो जाते हैं। हे प्रभो! मुझे न जाने कितनी कामनाएँ थी, मुझे अपने में न्यूनताएँ-ही-न्यूनताएँ दिखलाई देती थीं और मैं समझता था कि मेरी ये न्यूनताएँ पूरा यत्न करते हुए भी कई जन्मों में भी पूर्ण न होंगी, परन्तु हे पितः ! मैं क्या बताऊँ, तेरे ज्ञानप्रकाशमय दिव्य अन्तरिक्ष से मुझ पर तेरी एक ही बूँद गिरी, पर उसमें वह रस था कि उस तेरे शक्तिकण द्वारा मुझमें इन्द्रिय (इन्द्रवीर्य=आत्म-शक्ति) जाग गई, मुझे स्थिर पोषक रस मिल गया, मुझमें छन्दोबद्ध दिव्य ज्ञान प्रकट होने लगा, मुझे यज्ञों का दर्शन होने लगा (अर्थात् मुझे किस समय किस प्रकार से आत्मत्यागमय शुभकर्म करना चाहिए, यह भासित होने लगा) और पुण्यों द्वारा जिस सुख का अर्जन संसार करना चाहता है वह सुख भी मेरा साथी हो गया। इतनी सब वस्तुएँ मुझे इकट्ठी मिल गईं। लोगों को इस पर सहज ही विश्वास न होगा, पर यह सच है। सचमुच तेरे ज्ञान-भण्डार का एक ज्ञानकण, तेरी बलराशि का एक अणु, इस तुच्छ मनुष्य को सर्वथा भरपूर कर देता है।

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात्।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।

-यजु० ४०.१०

भावार्थ-जैसे विद्वान् लोग, कार्य कारण रूप वस्तु से भिन्न-भिन्न उपकार लेते और लिवाते हैं और उन कार्य कारण के गुणों को आप जानते और दूसरे लोगों को भी बताते हैंष ऐसे ही हम सबको निश्चय करना चाहिये।

सम्भूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयꣳसह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते।।

-यजु० ४०.११

भावार्थ-कार्य कारण रूप वस्तु निरर्थक नहीं है, किन्तु कार्य कारण के गुण-कर्म-स्वभावों को जानकर, धर्म आदि मोक्ष के साधनों में संयुक्त करके, अपने शरीरादि के कार्य कारण को जानकर, मरण दा भय छोड़कर, मोक्ष की सिद्धि करनी चाहिये। जिस कारण से यह शरीर उत्पन्न हुआ है, उसमें ही कभी न कभी अवश्यक लीन होगा। जिसकी उत्पत्ति हुई है उसका नाश भी अवश्य होगा, ऐसे निश्चय से निर्भय होकर, मुक्ति के साधनों में यत्नशील होना चाहिये।

सभा से सम्बन्धित आर्य समाजों एवं आर्य शिक्षण संस्थाओं के अधिकारियों की सेवा में

मान्य महोदय

सादर नमस्ते।

आज विश्व का सर्वाधिक चर्चित और चिन्तनीय विषय पर्यावरण है। पर्यावरण प्रदूषण विश्व की प्रमुख समस्या बनती जा रही है। पौधे मनुष्य को जीवनी शक्ति देते हैं और उसका रक्षण करते हैं। औषधियां प्रदूषण को नष्ट करने का प्रमुख साधन हैं। इसलिए उन्हें विषदूषणी भी कहा गया है।

इसी प्रकार वेदों में जल की उपयोगिता और उसके महत्व पर बहुत बल दिया गया है। जल जीवन है, अमृत है, भेषज है, रोगनाशक है और आयुवर्धक है। जल को दूषित करना पाप माना गया है। जल के विषय में कहा गया है कि जल से सभी रोग नष्ट होते हैं। जल सर्वोत्तम वैद्य है। पिछले दिनों एक सर्वेक्षण में बताया गया है कि 2020 तक भारत के 20 शहरों में पानी बिल्कुल खत्म हो जायेगा। इसलिये हमें इस पर भी गम्भीरता से विचार करना चाहिये और जल को सुरक्षित रखने के साधन अपनाने चाहिये। हमें अपनी आने वाली पीढ़ियों को सुरक्षित रखना है तो हमें जल को भी सुरक्षित रखना होगा। इसलिये सभा से सम्बन्धित सभी आर्य समाजों एवं शिक्षण संस्थाओं के अधिकारियों से विनम्र निवेदन है कि **इस वर्षाऋतु में अधिक से अधिक पौधे लगा कर मानव जीवन को बचाने का प्रयास करें और अपने बच्चों को जल सुरक्षित रखने के उपाय लगातार बताते रहना चाहिये।** इसके साथ ही अपने कार्यक्रम की सूचना सभा कार्यालय को देते रहें।

धन्यवाद सहित।

भवदीय,

(प्रेम भारद्वाज)

महामंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (रजि.)

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायाꣳरता।।

-यजु० ४०.१२

भावार्थ-जो अज्ञानी संसारी लोग, आत्मा और परमात्मा के ज्ञान से हानि, केवल अनित्य अपवित्र दुःख अनात्म रूप, अपने और स्त्री आदि के शरीरों को नित्य पवित्र सुख और आत्मस्वरूप जानकर इनके ही पालन पोषण अंजन-मंजन में सदा लगे रहते हैं, न वेदों का स्वाध्याय करते न ही विद्वानों का सत्संग करते हैं, ऐसे विषयों में लम्पट अविद्यारूप अन्धकार में पड़े अपने दुर्लभ मनुष्य जन्म को व्यर्थ खो रहे हैं। जो शास्त्र वा अन्य अनेक प्रकार की विद्या तो पढ़े हैं, परन्तु प्रभु का ज्ञान और उसकी प्रेम भक्ति से शून्य हैं। न वेदों को पढ़ते सुनते अनात्मविद्या के अभ्यासी हैं, वे उन मूर्खों से भी गए गुजरे हैं। मूर्ख तो रस्ते पड़ सकते हैं, परन्तु वे अभिमानी लोग नहीं पड़ सकते।

अन्यदेवाहुर्विद्याया अन्यदाहुरविद्यायाः।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।

-यजु० ४०.१३

भावार्थ-अनादि गुणयुक्त चेतन से जो उपयोग होने योग्य है, वह अज्ञान युक्त जड़ से कदापि नहीं और जो जड़ से प्रयोजन सिद्ध होता है, वह चेतन से नहीं। सब मनुष्यों को विद्वानों के संग योग, विज्ञान और धर्माचरण से इन दोनों का विवेक करके दोनों से उपयोग लेना चाहिये।

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रेस, मण्डी रोड जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित। सम्पादक-प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 **E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org**